

پہلے ہی

प्राक्कथन

कविता सर्वाधिक संवेदनशील विधा है और रचनाकार जब शब्द को उसकी आत्मा के साथ पकड़ कर अपने चिन्तन को व्यवत करता है, सम्पूर्ण श्रवित के साथ तो रचना जीवन्त हो जाती है। उसकी उम्र कितनी होगी, इस पर आलोचक जो चाहे कहे, पर उसका निर्धारण तो समय ही करेगा। जैसे भी हिन्दी में आलोचना का जो स्तर और दृष्टि रही है, वह कही भी, किसी भी विन्दु पर सन्तुष्टि नहीं देती। खैर।

सुरेन्द्र चतुर्वेदी का यह दूसरा संग्रह है। पहला कविता संकलन था और यह गजल संग्रह।

मेरा संकलन के शीर्षक से इतफाक नहीं है। सिर्फ इसलिए कि मेरी व्यक्तिगत मान्यता है कि सुरेन्द्र दर्द की बात कर सकते हैं, उसे देख सकते हैं, गहरे तक उसे छू नहीं सकते। क्योंकि प्रारम्भ में ही उन्होंने कहा है कि “बोझ मैंने जिन्दगी का अब तलक ढोया नहीं।” वे व्यंग्यकार हैं और इस दृष्टि से मैं इनका सम्मान करता हूँ। हिन्दी में अत्यधिक कमी है व्यंग्य रचनाकारों की और जब कोई युवा अपनी सम्पूर्ण तेजस्विता के साथ व्यंग्य को आधार बनाता है, तो एक बड़ी बात है मेरी दृष्टि में। गद्य में तो तीन-चार नाम हैं। पर पद्य में लगभग नहीं है। हास्य के नाम पर भी फूहड़पन ही अधिक उजागर हो रहा है।

इस नाते मैं सुरेन्द्र का इस गजल संग्रह के अवसर पर स्वागत करता हूँ और विश्वास करता हूँ कि उनकी तलखी गम्भीर स्वरूप लेगी।

— प्रकाश जैन
सम्पादक 'लहर'

दर्द बे-अन्दाज़

(गज़ल संग्रह)

१५४०

६.५.४७

~~श्रीरामचन्द्र~~



(प्रथम संस्करण)
अप्रैल, 1986

सर्वाधिकार सुरक्षित—सुरेन्द्र चतुर्वेदी

दरदं वे-अन्दाज—गज़ल संग्रह, सुरेन्द्र चतुर्वेदी

वितरक—अञ्जलि प्रकाशन, पुलिस लाईन चौराहा, अजमेर

आवरण—सुरेन्द्र चतुर्वेदी

मुद्रक—ए. के. पिन्टर्स, राजा मार्डकिल, श्रीनगर रोड, अजमेर

DARD BE-ANDAZ : Gazals by SURENDRA CHATURVEDI
Price Rs. 25

१

“बोझ मैंने जिन्दगी का,
अब तलक टोया नहीं ।
लाख विघलित हो गया,
पर पय कभी छोटा नहीं ।
जाने कितनी बार भेरी,
यह जूबां खींची गई ।
दर्द से द्रुत हो गया,
लेकिन कभी रोया नहीं ।”

आभार

स्य. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

बाबा नागार्जुन

मुद्रा राक्षस

मोहन स्वरूप चट्टा

अनुक्रम

- 1 लोग उम बस्ती के यारो इम कदर मोहताज थे
- 2 कटवा रहे हैं आजकल वो उम जुवान को
- 3 चलते-चलते जिम जगह सहरा नजर आने लगे
- 4 इम शहर में जिमके जितने यार है
- 5 मागो वो मनवाने में नाकाम हो गए हम
- 6 गर रेत इम दरिया की उडाने के लिए है
- 7 बैठ कर लोग कुछ वकीलो में
- 8 कुछ लोग उम्र भर ही उजालो में रहे हैं
- 9 पछी पिजरे से जब निकलता है
- 10 आखरी वकन इस जमाने को
- 11 जिम आदमी को गोजने थे वो मवान में
- 12 आग के साथ जना आग जलाने वाला
- 13 उडा के ले गई हवायें बहा-बहा मुझको
- 14 माम तक लेना वहा मरने में बदतर था कोई
- 15 दिन भर हम बनने है, शाम ढले ढहते है
- 16 यह कौन तीर बन कर उतर गया है मुझमें
- 17 बस्ती से कोई गुजरा जब आटा लिए हुए
- 18 था काम उनको मिल गया बस्ती जलाने का
- 19 दर्द बच्चो की तरह बढ़ने लगे
- 20 मछली के एक में वो नोर हो गए है क्या ?
- 21 लम्बी बहुत फहरिणत है जिनके गुनाहों की
- 22 आख होने लगी जब मजान गाव की
- 23 पहरुवों की आजकल कैसी ये हालत हो गई
- 24 जब से वे दावानल हो गए है
- 25 इक रोज तो मिटनी ही थी उनकी ये हस्तियां
- 26 भेडियो का जब कभी मनदान होता है
- 27 जिन्दगी सब जी रहे है इक पहेली की तरह
- 28 इम शहर का अब कोई हमदम नही क्या बात है ?
- 29 इक राजा के घुरे दिनों की हम पहचान हुए
- 30 राजपथ पर जब कोई इजाम आता है
- 31 तुम्हे गर जोर अपने बाजुओं का आजमाना है
- 32 हम जी रहे है इस कदर लम्हाइयो के बीच
- 33 टूटे हुए मकान की गिरती दीवार पर

34	जीते जी ये बोझ मासो का उठाना ही तो था	42
35	हाथ ताजा धूँ से जिनके सुखंतर है	43
36	चाहत का अपनी वाद में इजहार कीजिए	44
37	हाथ में जिनके सुनहरे हार थे	45
38	स्थिति उनकी बड़ी गम्भीर है	46
39	वक्त में जिनको किमी मोड़ पे मारा होगा	47
40	मत पूछिए किम हद तक उमके में सग हूँ	48
41	जगल का नियम फिर से बदलना पडा हमे	49
42	कुछ तो फूटे हुए मुकद्दर थे	50
43	जिक्र आने ही वो गुनाहो वा	51
44	जो जगह वक्त से पुरानी थी	52
45	झीपडी जिनके लिए तुमने बनाई है	53
46	हम समझे अनुराग शहर की गलियों में	54
47	लाश जब जब भी कोई लेकर के आया है	55
48	मत पूछिए मारे गए लोगों को क्या मिला	56
49	गम की दुनिया के जोहरी है, कितने जाने-माने हम	57
50	बीच हमारे केवल कुछ सामो की दूरी है	58
51	मूना-मूना कितना हमको आगन लगता है	59
52	तुम मेरी तकदीर में चाहो तो गम लिख देना	60
53	रात का पहला पहर और मैं	61
54	फूम के कुछ झीपडो को जिन्दगी कहते है वो	62
55	युद्ध न हम हारे होते गर, मिले न होते यार नए	63
56	देसेगा क्या राही और ?	64
57	कैसे देते थे भला अपनी बलि	65
58	इस शहर में शरम निरापद न खोजो	66
59	देह दीवारो में चिनवाने चलो	67
60	छाव गाव की नही यहा पर, तेज दुपहरी है	68
61	भाती है उनको हमपे बड़ी खोभ आजकल	69
62	काच के हम सवालात है	70
63	अपनी आदत सुधार कर देखो	71
64	देख नाखून डर गई मुनिया	72

गज़ल-1

लोग उम बस्ती के यागे, इग कदर मोहताज थे,
थी जुवां खुद की मगर, मागे हुए छन्फाज थे ।
काच को छोड़े खड़ी थी, उम शहर की गीशनी,
जिम शहर के लोग, मय के सब निशानेवाज थे ।
बह मटक थी या तवायफ का कोर्टे छहमास थी,
जिम मटक पे घाते - जाते लोग बे-घावाज थे ।
लोट कर घाए नहीं खुशिया जो लेने की गए,
थी किमी अन्धे मफर का बेगहम भागाज थे ।
आदमी होते तो चेहरा छील कर पहचानते,
उम शहर के लोग किन्तु भिर्फ कच्ची प्याज थे ।
'मूल' की हम गोज में, फांसी के फदे तक गए,
मर गए वो मूल थे, जो बच गए वो ब्याज थे ।
काफिए थे वो मेरी गजलों के यागे मय के मय,
जिनके हर लम्हे में शामिल दर्द-बे-अन्दाज थे ।

गज़ल-2

कटवा रहे है आजकल वो उम - जुवान को,
कहने जो लग गई है अपनी दाम्तान को ।

है दूर काफी इस शहर में मन के मोहत्ते,
फिर भी मुरों जोड़ती है हर मकान को ।

धुएँ से ढक रहे है तिर सीमेंट के जगल,
घब खोज कर नाएँ कहा से आममान को ।

है हर नजर अधी, जुवा गू गी है जो यागे,
कुछ भी मुनाई अब नही देता है वान को ।

सेतो को डम गई थी कल बारूद की नागिन,
अब तक न चल सका पता घनपढ किमान को ।

है मर चुका सब कुछ मगर जिन्दा खड़ी है लाश,
जैसे चुका रही है वो बाकी लगान को ।

गज़ल-3

चलते-चलते जिम जगह, महारा नजर घाने लगे,
हाथ मे दरिया उठा वो प्याम दिखवाने लगे ।
लोग तब रटने लगे, कानून तोते की तरह,
जब उन्हें मतलब मलाखो का वो समझाने लगे ।
जिम गली मे जानवर के गोशत का बाजार था,
उम गली मे आदमी वो भून कर खाने लगे ।
दोस्तो मे बेग़वर, वह शर्म इतना हो गया,
दोस्त खुद मेले मे उमकी जेब कटवाने लगे ।
शोर - गुल चारो तरफ जिनकी खिलाफत मे उठा,
लोग वो भी भीड मे जाकर के चिल्लाने लगे ।
मकदरो मे खोज वो जब थक गए इन्मानियत,
भँकदे मे उम्र अपनी जाके दफनाने लगे ।

गज़ल-4

इस शहर में जिनके जितने पार हैं,
आस्तीनों में छिपे हथियार हैं ।

बेखबर खुद में मगर हैं बिक रहे,
आदमी है या कोई अखबार है ।

हो गए हैं वो ही अब घाघे हकीम,
जो कि बरसों से पडे बीमार हैं ।

बायदों के युद्ध में बयो लोग फिर,
हाथ से छूटी हुई तलवार हैं ।

आज भी कुछ लोग मुर्दा है मगर,
नाम से ताजा तहलकेदार है ।

तीन सौ पैंसठ दिनों के साल में,
लोग एक भूला हुआ इतवार हैं ।

· गज़ल-5

मांगो की मनवाने में नाकाम हो गए हम,
घ्रांदोलन करते-करते 'आमाम' हो गए हम ।
वरगद के पेड़ों के नीचे घाम नहीं उगती,
मौसम पर बेवजह लगा इल्जाम हो गए हम ।
बाप हुआ मेवा निवृत्त और बेटा बेरोजगार,
वनवासी भूखी पीढी के राम हो गए हम ।
कुर्मों की छाया में पल कर बड़े हुए मझाट,
भूखे पेटों में निकला पैगाम हो गए हम ।
बम्ती के हत्यारे देखो 'समद' पहुँच गए,
फुटपाथों की खाक छान नीलाम हो गए हम ।

गजल-6

गर रेन इम दरिया की उडाने के लिए है,
फिर कौनमा दरिया जो नहाने के लिए है ।
यह हमता हुआ भाज के इन्मान का चेहरा,
लगता है नुमाइश में दिखाने के लिए है ।
इम शहर में प्यासे की भयम्बर नहीं पानी,
मडको पे मगर खून बहाने के लिए है ।
ये वेद, ग्रन्थ, गीता और कुरान, वार्डबल,
बस यपना-यपना चेहरा छिपाने के लिए है ।
जो खोल के मीना खडा है गाधी मार्ग पर,
गोली नहीं कुर्मी कोई पाने के लिए है ।
दुःख-दर्द इस जमीन का, खामोशी गगन की,
जैसे गजल में लिख के मुनाने के लिए है ।

गज़ल-7

बैठ कर लोग कुछ वहीनों में,
उम्र को जी गए दलों में ।
उस मुमाफिर ने प्यास में डरकर,
होठ दफना दिए हैं टीलों में ।
वह कमल आदमी के अन्दर था,
हम जिसे दूँदने थे भीलों में ।
या खुदा किम जगह पे मस्जिद है,
आदमी इक नहीं है मीलों में ।
टाग कर लोग उम मसोहा को,
जाने क्या दूँदने है कीलों में ।

गज़ल-8

कुछ लोग उम्र भर ही उजालो में रहे हैं,
यह बात ग़ौर है कि खयालो में रहे हैं।
मुश्किल नहीं उनके लिए ईमान बेचना,
जो लोग हमेशा से दलालो में रहे हैं।
गीता पे रखके हाथ बोले भेड़िए हमसे,
हम उम्र भर इसान की खालो में रहे हैं।
कुछ लोग ढूँढते ही रहे रीढ़ की हड्डी,
शायद वो मकड़ी की तरह जालो में रहे हैं।
उनको समय ने पी लिया है चुस्किया लेकर,
जो वेन्चर हो जाम ग़ौर प्यालो में रहे हैं।
अग्याय की लड्डा जलाना अब नहीं मुमकिन,
हम व्यस्त उम्र भर के मवालो में रहे हैं।

गज़ल-9

पंछी पिजरे मे जब निबलता है,
जाने क्यों घाममा को खलता है।

वक्त ! इतरा न अपनी घादत पर,
जेंट भी करवटें बदलता है।

आग उसकी वहाँ गई यागे,
अब तो वो बर्फ सा पिघलता है।

जिमके अन्तर मे एक ममन्दर है,
वह भी अब थूक ही निगलता है।

वह दिया रौशनी नहीं देता,
जो कि अधो के आगे जलता है।

आईना अर्थहीन हो जाता,
आदमी जब भी गुद मे मिनता है।

गज़ल-10

घाबरी वक्त इम जमाने को,
घर से निकले है आजमाने को ।
बुझने दीपक हजार थे लेकिन,
घर मेरा ही मिला जलाने को ।
आधिया पूछती है बरगद से,
हे घरीदा कही पे दाने को ।
बन्द मन्दिर में इक कबूतर था,
कौन जाता उसे बचाने को ।
सुबहा भटके तो शाम को लोटे,
घर ही बेहतर था मिर छुपाने को ।
क़ैद भीतर हजारो पछी थे,
बाज़ लेकिन मिला उड़ाने को ।

18/ददं बे-अदार

गज़ल-11

जिम आदमी को षोजते थे वो मकान मे,
वह आदमी तो उड रहा था आसमान मे ।
आवाज बे-धमर मेरी होती ही जा रही,
क्या नुस्ख है बताइये मेरे कयान मे ।
मुदों को लादता हुआ इठला रहा था वो,
जैसे वही था आदमी पूरे जहान मे ।
बजर जमी पे मीली तलक मञ्ज घाम थी,
थे खून के निशा मगर हर ढलान मे ।
गाडी गई जो कील तो रोने लगा सलीब,
गू गो ने दी मदा मगर बहरो के कान में ।
मघाटा खा गया शहर, भूचाल पी गया,
जब बेचने लगे कफन मुदें दुकान में ।

गुजल-12

आग के साथ जला आग जलाने वाला,
अब कहा लौटेगा वो राख उठाने वाला ।
अब भी दहशत से परेशान है पूरी बस्ती,
रस्मिया छोड़ गया साप दिखाने वाला ।
रोशनी गिरती नजर आई जो कल रस्ते में,
एक अधा ही मिला उसको उठाने वाला ।
उम्र काटी थी अधेरो में उजालो के लिए,
पास मरघट के मिला राह दिखाने वाला ।
आईना खीफ में कुछ देर तो कापा होगा,
एक पत्थर जो मिला माथ निभाने वाला ।
दायरो की ही तरह चलता रहा पानी में,
किस तरह भटका था वो नाव चलाने वाला ।

गज़ल-13

उडा के ले गई हवाये वहाँ-वहाँ मुझको,
नही था जाना कभी भी जहा-जहा मुझको ।
बसी हुई थी वहा खुशनुमा सी बस्ती मगर,
कही नजर नही आया मेरा मका मुझको ।
ये माना आग कुछ अदर न थी मेरे लेकिन,
दिखाई क्यों देता था बाहर ये धुआ मुझको ।
थी कुछ तो पहले ही आवाज बे-असर मेरी,
बना गए है कुछ हालात बेजुबा मुझको ।
मेरी जमीन ही वापस दिना हवा मुझको,
के अब न चाहिए कोई भी आममा मुझको ।
हवा मे उडते हुए कोई चीज थामी थी,
वो दे गया है गरेबा मेरा कहा मुझको ।

माम तक लेना वहा मग्ने से बदतर था कोई,
 जिस कमाई के यहा घायल कबूतर था कोई ।
 भीड मे जो कल कुचलकर मर गया उस शहर के,
 हाथ में घाटे का इक खाली कनस्तर था कोई ।
 कंचुली इक माप की लोयो के बीचो-बीच थी,
 हर किसी के हाथ में भारी सा पत्थर था कोई ।
 उम तरफ धूम्रां उठा तो लोग चिल्लाने लगे,
 क्या हुआ, मालूम क्या, सबका यह उत्तर था कोई ।
 नीद हमको आखिरी आई तो सोने के लिए,
 धोकडो की लकड़ियों का एक बिस्तर था कोई ।

22/ददं वे-अंदाज

गज़ल-15

दिन भर हम बतते है, शाम ढले ढहते है,
दरंद को धरोदा है, जिममे हम रहते है ।
लौट गए साहिल पे कश्तियो को रखकर के,
रेत के ममदर को दरिया जो कहने है ।
लोग तो मकानो की छत जैसे नाले है,
सूखे मे धमते है, बारिशो मे बहते है ।
फटे हुए मोजो ने जूतो से यह पूछा,
क्या दु.ख पैगबर भी हम जितना सहते है ।

यह कौन तीर बन कर उतर गया है मुझमें,
 यह कौन हादसे सा गुजर गया है मुझमें ।
 उसकी शिनाएत अब तक मैं कर ही नहीं पाया,
 वो कौन शस्त्र था जो कि मर गया है मुझमें ।
 जो आधी बन के आया वो जी रहा है मुझमें,
 जो घरीदा था वो कब का बिभर गया है मुझमें ।
 वो नाम था या कोई चाबुक भी एक शै थी,
 जो नवम बन के अब भी उभर रहा है मुझमें ।
 वेताब हूँ मैं अब भी यह जानने के खातिर,
 है कौन सा महीना जो ठहर गया है मुझमें ।

24/दश-वे-अदाब

गज़ल-17

वस्ती से कोई गुजरा जब घाटा लिए हुए,
भूखे वच्चे हैंसे मगर मघाटा लिए हुए ।

चिमनी के धूँएँ ने थक कर अंबर को देखा,
बाज जहा उड़ता था इक, फर्गटा लिए हुए ।

निगल गया अजगर औरत तब जगल धूँ बोला,
अब तो मोयेगा वह भी खर्गटा लिए हुए ।

ले आया वह एक तराजू दर्द तोलने की,
जखम मगर हर बार तुले थे घाटा लिए हुए ।

गया खोजने था वह अपने भीतर का हीरा,
लौटा पर वह खून सना इक काटा लिए हुए ।

था काम उनको मिल गया बस्ती जलाने का,
 जो के बहाना दूँदते थे दिल लगाने का ।
 वो बद कमरे का सफर बन करके रह गए,
 था शौक जिनको हर अँधेरे आजमाने का ।
 वह शर्म रोया किसलिए मिल कर हिमालय से,
 आदी नहीं था जो कभी भी गिंडगिडाने का ।
 वो बेवजह ही जी रहे है मूलिया बन कर,
 जिनको नशा था एक दिन ईसा कहाने का ।
 था वो अगर ज्वालामुखी तो क्यों नहीं धधका,
 क्यों हो गया अभ्यस्त वह आँसू जमाने का ।
 जो आधियों को ब्याज पे ले करके आए है,
 ठेका उन्ही को मिल गया है घर बनाने का ।

26/दरं बे-अंदाज

ग़ज़ल-19

दर्द बच्चों की तरह बढ़ने लगे,
आँसुओं की पीठ पर चढ़ने लगे ।

दौड़ में खरगोश फिर बछुओं से जा,
जीतने की शर्त पर अड़ने लगे ।

अब दवाओं का अमर होता नहीं,
जख्म पोखर की तरह मड़ने लगे ।

पक्षियों का फिर कहीं पिजरा खुला,
देखिए ये बाज फिर उड़ने लगे ।

ले के आए है वो तब सजीवनी,
जबकि मुँह कब्र में गढ़ने लगे ।

बाँध राखी औरतों के हाथ में,
चूड़ियों को भरे है लड़ने लगे ।

क्या पता क्यों लोग जा कर उस जगह,
गाने-गाने मसिया पढ़ने लगे ।

मझरी के हक में वो नीर हो गए हैं क्या ?
मरते ही मछुआरे पीर हो गए हैं क्या ?

नाली में उमने फिर फेंक दिया रिश्तों को,
बिल्ली की झूठी वो खीर हो गए हैं क्या ?

देवदार वृक्ष तले अजगर ने लूट लिया,
भरने उम हिरणी की पीर हो गये हैं क्या ?

देखने को नगापन दोस्त सभी घातुर है,
द्रोपदी का धारो हम पीर हो गए हैं क्या ?

शब्दों के खंडहर में भाषा ये मोच रही,
सम्बोधन जहर बुझे तीर हो गए हैं क्या ?

28/दरद बे-अंदाज

गज़ल-21

लबी बहुत फहरिषत है जिनके गुनाहो की,
करने लगे है वो वकालत बेगुनाहो की ।

बैसे तो है हर हाथ में ह्माल मौमम के,
पर मामने उनके खडी, माजिश ह्वाओ की ।

कोडी हुषा है इम कदर उम शहर का कानून,
थाने, दुकान बन गए है अब गवाहो की ।

है काच की खुशियो के सामे दर्द की चट्टान,
जिमके नही है पाम गु जाइश गुफाओ की ।

है इम कदर शामन वहा पर बुतपरस्तो का,
पत्थर बसा रहे है अब बम्ती खुदाओ की ।

आख होने लगी तब सजल गाव की,
 लोग मिखने लगे जब गजल गांव की ।
 तूटा श्रीरत को जिम दिन गया शहर मे,
 वो ये बोली कि मैं हूँ फमल गाव की ।
 वह अदालत थी या था कमाई का घर,
 कट रही थी जहा पर नमन गाव की ।
 हाथ दीपक पे रख उरलुओ ने कहा,
 रौशनी हम गए है निगल गाव की ।
 पाम उमके शहर की कई खाते थी,
 बोला मूरत में दूंगा बदल गांव की ।
 राजधानी मे धुआ सा उठने लगा,
 आते जब आई बाहर निकल गाव की ।

गज़ल-23

पहलियों की आजकल कैसी यह आदत हो गई,
गोनियां मालिक पे दागी, बम, हिफाजत हो गई।
मैमने घर से उठा कर भेड़िए जो ले गए,
देश लो उन भेड़ियो तक की जमानत हो गई।
काटो-फाडो या जलाशो देश के मविधान को,
कैमले अंधे है अब, बहरी सदानत हो गई।
फेफडे भी खून पर विश्वास अब करने नहीं,
जिस्म के भीतर भी देखो अब दगावत हो गई।
मर गए सिद्धान्त मारे सात्मा तक बिक गई,
घमं गही किन्तु उनको फिर ममानत हो गई।
मदियों में बैठ वो बेचा किए इन देश को,
मां की गाली से भी बद उनको इवावत हो गई।

गजल-24

जब मे वे दावानल हो गए है,
मीम के हम महल हो गए है ।
भील जब से उन्होने है छोडी,
काच के हम कमल हो गए है ।
कल तलक वो हमी से थे जिन्दा,
दूर जो आजकल हो गए है ।
रेत में हम हिरण जैसे भटके,
रस्ते रटोबदल हो गए है ।
वो बरम भी कटे एक पल में
ये बरम जैसे पल हो गए है ।
हम मरल से कठिन हो गए और,
वे कठिन में मरल हो गए है ।
कल तलक तो हमी मगाजल थे,
आज हम ही मरल हो गए है ।
उनकी आँखों में डूबी हुई सी,
दर्द की हम फमल हो गए है ।
वे अमल थे, अभी भी अमल है,
हम अमल से नकल हो गए है ।
भूम बैठे है वे जिनका गा कर,
हम क्यों ऐसी गजल हो गए है ।

32/दरुं थे-अदाज

गज़ल-25

भेड़ियों का जब कभी मतदान होता है,
मेमनों पर फिर नया महमान होता है ।

बाहर ससद के रमाओ धूनी अब यारो,
मंदिरों में अब कहां भगवान होता है ।

राजपथ पर लोग जो मजमा लगाते हैं,
मच पर उनका ही अब सम्मान होता है ।

मकबरो पर बैठ कर इमानियत रोनी,
आदमी अब क्यों नहीं इमान होता है ।

जन अदालत जब कभी खंजर उठाती है,
हाथ में मत्ता के तब सविधान होता है ।

गोटिया जब-जब भी यारो राम बनती है,
आदमी तब-तब यहा हनुमान होता है ।

इक रोज तो मिटनी ही थी उनकी ये हस्तिया,
 नूफान में जिनको मिली कागज की कश्तिया ।
 कपयूँ लगा था पेट पर, सीने पे थी मंगीन,
 ऐसे में याद आई बहुत मा की धपकिया ।
 अघों के मोहल्ले में जो बाटा गया काजल,
 तब आईनो ने टूट ली चेहरे की मस्तिया ।
 बच्चे भुलम के मर गए रोटी की आग में,
 वह बीतता ही रह गया सूरज की अस्थिया ।
 फूलों के चेहरों पर भी जब छिडका गया तेजाब,
 तब खुदकशी करने लगी बागों की तितलिया ।
 घेठा दलाल हो गया, जाकर के शहर में,
 उमको सुनाई दी नहीं फिर मा की मुबकिया ।
 उग गाव को सीपा गया सीमेट का कफन,
 जिमने बसाई थी कभी देवों की यस्तिया ।

गज़ल-28

जिन्दगी मव जी रहे हैं इक पहेंली की तरह,
घपने पुरगों से मिली मूनी हवेनी की तरह ।

हम निरक्षर हो मही पर ज्योतिषी में कम नहीं,
पद लिया करते हैं चेहरे हम हथेली की तरह ।

नाम पर खुशयू के उनके पाम में बच्चे ही है,
खिल नहीं सकते हैं जो जूही-चमेनी की तरह ।

उम शहर की वो गली कितनी विवश थी उन दिनों,
जिन दिनों अलवर मरी थी वह नवेनी की तरह ।

उम नदी के पाम में टूटी हुई जो नाव है,
है सुहागिन की किसी विधवा महेंली की तरह ।

इस शहर का अब कोई हमदम नहीं क्या बात है ?
 मौत पर इसकी, वही मातम नहीं क्या बात है ?
 हर गली के छोर पर दरखत खड़े हैं दर्द के,
 मुस्कराता अब कहीं मौसम नहीं क्या बात है ?
 जो नदी तुमसे निकल कर, पहुँचती थी मुझ तक,
 उस नदी का अब वही सगम-नहीं क्या बात है ?
 जो दिया जलता रहा था आधियों के मामले,
 उस दिए की लौ में अब कुछ दम नहीं क्या बात है ?
 जो हमें उपदेश देते थे हिमालय की तरह,
 आज वे अपनी जगह कायम नहीं क्या बात है ?
 खून से तुमने लिखी थी रोशनी की जो गजल,
 उस गजल की अब कोई सरगम नहीं क्या बात है ?

36/दर्द के-अंदाज़

गज़ल-29

इक राजा के बुरे दिनों को हम पहचान हुए,
इक-इक करके सब शुभचिंतक अंतर्ध्यान हुए ।

जुड़े और फिर जुड़कर टूटे अपने हर रिश्ते,
बिना पिता की बेटी के हम कन्यादान हुए ।

कुछ मौलान, कुछ घुटन और कुछ मकड़ी के जाले,
बंद अंधेरे खडहर के हम रोगनदान हुए ।

भूषा भुषा, नंगी दुश्री, तार - तार पत्नी,
फटी हुई उनके नौकर की हम बनियान हुए ।

उजियालो के शिविर लगाकर बैठ गए अंधे,
और मूरज की खोज में निकला हम अभियान हुए ।

अपने ही आगम में उसने गाड़ दिए बच्चे,
कितने मंहमे इस दुनिया के कश्मिस्तान हुए ।

राजपथ पर जब कभी इल्जाम आता है,
 आदमी फुटपाथ का ही काम आता है ।
 भेड़ियों की आदते इतनी अहिंसक है,
 हर जुवा पर भेमतों का नाम आता है ।
 एक अंधे गाव का सूरज निवासी है,
 अब कहा उस गाव का पैगाम आता है ।
 किमलिए शरमा गए बाजार में आकर,
 बेचने मीठा यहाँ खुद राम आता है ।
 माप से लिपटे रहे कुर्मी के पावों पर,
 जैसे उनको बस यही एक काम आता है ।
 कौन जाने डाकिया किस द्वार आ जाए,
 खत बगावत का बड़ा गुमनाम आता है ।

तुम्हें गर जोर घाने राज़ूषों का पात्रमाना है,
 तो तुमको नैर कर गुद घाट के उम पार जाना है ।
 ये चेहरा घादमी का वो कहीं गं ले तो पाए है,
 मगर दस्तूर उनको जानवर का ही निभाना है ।
 जहां पर जिन्दगी त्योहार जाकर के मनाती है,
 वहा कुछ दोस्तों को मोत का मशमा लगाना है ।
 किमी ने ममखरो की इमनिए बस्ती बमाई है,
 वहां भरने मे पहले कपोकि सबको मुम्कराना है ।
 वहा वे घोखनी के नाम तक ले धरपराने है,
 वहां गिर मूमली के मामने उनको उटाना है ।
 जिन्हें आवाज घपती तक गुनार्ट दे नही पाती,
 बडा अफसोस उनके मामने दुखडा गुनाना है ।

हम जो रहे है हम कदर तन्हाइयो के बीच,
 मूखा हुआ हो पेड ज्यो अमराइयो के बीच ।
 हम दर्द के ननिहाल मे कुछ हम तरह पले,
 विधवा ननद पली हो ज्यो भोजाइयो के बीच ।
 वो लोट घ्राए छू के बस । माहिल-ए-नामवूर,*
 वो जा न मके तैर के गहगाइयो के बीच ।
 उनको भग्म था ये कि सभी लोग है अपन
 वो जी लिए हम भरम मे हरजाइयो के बीच ।
 था रेत का कस्वा जहा डक भी शजर न था,
 हर शस्म जिया अपनी ही परछाइयो के बीच ।
 मरना नही आया उन्हे जीने के शोक मे,
 मर-मर के लिए निम कदर हमवाइयो के बीच ।

* नामवूर—बेमन्न

40/दर्द के-अनाज

टूटे हुए मकान की गिरती दीवार पर,
कुछ लोग खुश होने लगे मूरज उतार कर ।

छप्पर को फाड़कर खुदा देगा ये मोच कर,
इक भौंपडी बैठी रही भोली पसार कर ।

दू डा था हर कही मगर खुद मे खुदा मिला,
देखा था हमने खुद मे ही खुद को पुकार कर ।

बिकते नही जो हम तो हमे लूट लेते वो,
मजबूरिया थी, बिक गए मासिक पगार पर ।

इक पल को जहा ठहरना पारो फिज़ूल था,
नोटे हैं वहां से भी हम मदियां गुजार कर ।

घांखों मे काच पीसकर वो लोग चल दिए,
जो थक चुके थे, नीद का रस्ता बुहार कर ।

जीने जी ये बोझ सासो का उठाना ही तो था,
 जिन्दगी को छोड़ फिर इक रोज जाना ही तो था ।
 कब तयक अफसोस करते दीये के बुझने का हम,
 रात को गर ना सही, सुवहा बुभाना ही तो था ।
 लिख दिया था मौत ने तकदीर पर जिस गीत को,
 गीत वह हैमकर या रोककर गुनगुनाना ही तो था ।
 वो नदी हरदम बहाती थी किमी एक गाव को,
 बाढ़ का डर था हमे पर घर बसाना ही तो था ।
 हर तरफ थे रास्ते पर थी नही मजिल कही,
 दमलिए कुछ दूर चलकर लौट घाना ही तो था ।
 मिर भुकाने के लिए हरगिज न हम तैयार थे,
 उनके हाथो डमलिए मिर को कटाना ही तो था ।

42/दरद वे-अंशज

शर शरदः नूँ ते विन्दे सुन्दर है,
 नो वही इन्द्रियों के चन्द्र है ।
 पण्डितों को है बहुत धरमोंत इनका,
 निरुद्धा वन कहीं गये मिट्टी के पर है ।
 नरक है स्वयं के वन पर मोरों,
 इन गुरु के नाँव भी विन्दे निरुद्ध है ।
 बौद्ध बुद्ध का भी न कोई जान पाया,
 नरक जो नोय है या जानवर है ।
 नाँव में विन्दे कमल है मत गिनो तुम,
 दे विन्दो रि भीन में विन्दे मपर है ।
 नाँव दे नीचोंग धव मूरज का पोधा,
 जो दिने की भी तनक से वेगवर है ।

जीते जी ये बोझ साँसों का उठाना ही तो था,
 जिन्दगी को छोड़ फिर इक रोज जाना ही तो था ।
 कब तलक अफमोस करते दीये के बुझने का हम,
 रात को गर ना मही, सुवहा बुभाना ही तो था ।
 लिख दिया था मौत ने तकदीर पर जिस गीत को,
 गीत वह हैमकर या रोककर गृनगुनाना ही तो था ।
 वो नदी हरदम बहाती थी किमी एक गाव को,
 बाढ़ का डर था हमें पर घर बसाना ही तो था ।
 हर तरफ थे रास्ते पर थी नही मजिल कही,
 इमलिए कुछ दूर चलकर लौट घाना ही तो था ।
 मिर भुकाने के लिए हरगिज न हम तैयार थे,
 उनके हाथो इमलिए मिर को बटाना ही तो था ।

42/दरद वे-अंदाज़

हाथ ताज़ा खूँ मे जिनके मुर्गतर है,
 लो वही इसानियत के पक्षधर है ।
 आधियो को है बहुत अफमोम इसका,
 मिर उठा कर कयो खडे मिट्टी के घर है ।
 नाचता है साप के फन पर मपेरा,
 इस शहर के साप भी कितने निडर हैं ।
 चीख सुन कर भी न कोई जान पाया,
 कट रहे जो लोग है या जानवर हैं ।
 भील मे कितने कमल है मत गिनो तुम,
 ये गिनो कि भील में कितने मगर हैं ।
 लोग बे सीचेंगे अब मूरज का पीधा,
 जो दिये की लौ तलक मे बेखबर है ।

चाहत का अपनी बाद में इजहार कीजिए,
 आवाज पहले अपनी वजनदार कीजिए ।
 क्यों हाथ में तलवार लिए आप खड़े हैं,
 गर जीतनी है जग तो फिर वार कीजिए ।
 मजिल बनाना ही नहीं काफी है दोस्तों,
 मंजिल के लिए रास्ता तैयार कीजिए ।
 अपने अमूलों के लिए जीना जहरी है,
 पर मौत भी आए तो स्वीकार कीजिए ।
 उड़कर के पार कीजिए या तो समदर को,
 या कि इसे फिर तैर कर ही पार कीजिए ।
 ये भूलिए कि साथ में है फ़ौज यारों की,
 अपने ही दम पे आप एतेबार कीजिए ।

44/ददं वे-अंदाज़

अरघान (कविता संग्रह : 1984)

। : सी.50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

हाथ मे जिनके मुनहरे हार थे,
 लोग वे दुर्भाग्य मे लोहार थे ।
 जो मिले थे बाग में जुगनू थे वो,
 कौन कहता है कि वो अगार थे ।
 वक्त ने जिनको हराया था कभी,
 हम नही थे वो मिर्फा हवियार थे ।
 जिम जगह पर रौशनी अधी हुई,
 उल्लुओ के उस जगह दरवार थे ।
 गिद्ध, कौए, चील और कुत्ते न थे,
 वो तो सबके सब हमारे यार थे ।
 बिक रही थी उम्र सब्जी की तरह,
 जिस जगह पर जिस्म के बाजार थे ।
 डाक्टर को मारकर भागे थे जो,
 लोग कहते है कि वो बीमार थे ।

स्थिति उनकी बड़ी गम्भीर है,
 पाम में जिनके पराई पीर है ।
 दोस्त पाडव है हमारे इमलिए,
 हाथ में फिर कौरवों के नीर है ।
 रौशनी राशन पे बाटी जाएगी,
 उल्लुघो की यह नई तदवीर है ।
 रेत का दरिया है उनके सामने,
 पांव में जिनके बधी जर्जर है ।
 जीतना या हारना तो बाद का,
 पर जो पहले हाथ मारे मीर है ।
 घुद जना डाता है 'राभे' ने उमें,
 कितनी बदकिस्मत बेचारी हीर है ।

46/दरें बे-अंदाज

प्रथम (कविता मयह : 1984)

: सी-50, गौरनगर, माधर विश्वविद्यालय, माणर—470003

वक्त ने जिनको किमी मोड़ पे मारा होगा,
पास उनके वहा तिनके का महारा होगा ।

कब्र इक पल तो बड़े ज़ोर से कांपी होगी,
मा ने जब चांद को गोदी से उतारा होगा ।

हो मका जो न मगा घपने ही धरवालों का,
बो सगा किम तरह ऐ-दोस्त तुम्हाग होगा।

मच मे लाश उठाने की नहीं आजा है,
मक्की फरमाइश पे यह दृश्य दुबारा होगा ।

जो भी हो चीज नहीं है वो समन्दर जैमी,
जो समन्दर की तरह होगा तो सारा होगा ।

मत पूछिए किस हृद तक उमके में मंग हूँ,
 सूखी नदी के घाट की काई का रंग हूँ ।
 एक क्षण को जरा गौर से पहचानिए हुजूर,
 बलवे में कटे आदमी का एक अंग हूँ ।
 मेरे अधीरे में जरा चल कर तो देखिए,
 जो पहुँचती है रौशनी तक वो सुरंग हूँ ।
 माँके को मेरी बे-बजह खानत न दीजिए,
 मैं खुद-ब-खुद माँके से टूटी एक पतंग हूँ ।
 उम खत में कुछ भी तो नहीं लिखा है दोस्तो,
 कोने फटे को देखकर धब तक मैं दग हूँ ।
 मैं भोगता हूँ पातना पर चीघ्रता नहीं,
 मैं हम जुवा से दोस्तो बेहद ही तग हूँ ।

48/दरं बे-घन्दाज

अरघान (कविता संग्रह : 1984)

: सं. 50, पीरनगर, भागर विश्वविद्यालय, भागर—470003

गजल-41

जगल का नियम फिर से बदलना पडा हमें,
भेडो की खाल ओढ जब चलना पडा हमे ।

जवानामुखी था मामने भीतर था समन्दर,
इम हाल मे अ-दोस्त उबलना पडा हमे ।

मरने के डर से खुदकशी करने लगे जो फूल,
काटो की क्यारियो मे तब खिलना पडा हमे ।

जिनके महल मे, रौशनी का जिस्म था बिका,
उनके महल मे उम्र भर जलना पडा हमे ।

मूरज के साथ हम गए आकाश को छूने,
पर दिन ढले ही दोस्तो, ढलना पडा हमे ।

हम 'मेनका' के सामने बैठे थे ध्यान को,
मत पूछिए किस तरह सभलना पडा हमे ।

कुछ तो फूटे हुए मुकद्दर थे,
 और कुछ दर्द अपने अन्दर थे।
 अपने भीतर जो देगा हमने कभी,
 दूर तक रेत के समन्दर थे।
 घाईने के वने थे टूट गए,
 किमकी कहते कि दोस्त पत्थर थे।
 हमने पहना जिन्हे या कोट समझ,
 वे सभी दोस्ती के अस्तर थे।
 जो गुलाबों की महक देते थे,
 उनके सीने में कई नश्वर थे।

50/दर्द के-अंदाज

उम्र जलपर का कांचे हूँ (बाबुलिसिद्ध : 1931)
 अरपान (शबिता मद्रह : 1934)

मॉ. 50, गौरनगर, सागर विश्वविद्यालय, सागर—470003

गज़ल-43

जिन्हें घाते ही वो गुनाहों का,
नाम रटने लगा गवाहों का ।
उमने पांवों में बाध कर घु घरू,
फामना तय किया वफाओं का ।
मैकदे से निकल के लोग कई,
पूछते है पता गुफाओं का ।
उस परिन्दे को खोज कर लाओ,
मोड दे जो कि हल हवाओं का ।

गज़ल-45

भौपट्टी जिनके लिए तुमने बनाई है,
हाथ में उनके फकत दियामलाई है ।

जुड़ गया कानून से कितना भगा रिश्ता,
जेबकतरे बाप का बेटा सिपाही है ।

घब अघेरे की सिफारिश कर रहे है वो,
इस शहर की रौशनी जिनने चुराई है ।

भीड़ भगदड़ में कुचल कर मर गया है जो,
हाथ में उस शम्स के मा की दवाई है ।

फाड़ कर फेंकी थी इक दिन जो गजल हमने,
वह गजल फिर से किमी ने गुनगुनाई है ।

खत लिखा है शहर में दादी को पाने ने,
आजकल वो शहर भर का घर जवाई है ।

गजल-46

हम समझे अनुराग, शहर की गलियो में,
मगर छिपे थे नाग, शहर की गलियो में ।
बेच दिया सवने, अन्दर के सूरज को,
दूँडा किए चिराग, शहर की गलियो में ।
मदा सुहागिन बन कर नागिन बैठ गई,
लुटते रहे मुहाग, शहर की गलियो में ।
गाव छोड़ते बक्क, जटम ऐसा पाया,
मिटा न पाए दाग, शहर की गलियो में ।
हैलो, टाटा, बॉय-बॉय, सॉरी डीयर,
मिफं बना खटगाग, शहर की गलियो में ।
धुएँ से पहचान हुई पहले उनकी,
फिर ले आए घाग, शहर की गलियो में ।
गिश्तो के पेड़ों पर बैठे कटफोड़े,
करते रहे मुगाय, शहर की गलियो में ।

54/दरं चे-अंदाज

गज़ल-47

लाश जब-जब भी कोई लेकर के आया है,
हमने ही उस लाश को कथा लगाया है ।

जिन्दगी का अर्थ इक हमने भी खोजा है,
जिन्दगी यम मौत का आधा किराया है ।

क्या कमायेगा कोई इन्सान दौलत को,
दरद हमने दोस्तो जितना कमाया है ।

भीड़ नाले की बगल में देख वो बोला,
गर्भ सगता है किमी ने फिर गिराया है ।

मूर्य को मिफलिम हुई है चाद को टी बी.,
इस शहर को इसलिए तम राम आया है ।

गज़ल-48

मत पूछिए मारे गए लोगो को क्या मिला,
जिनके लिए थे वो मरे उनको खुदा मिला ।
हम जिन शहर में देवता को खोजते फिरे,
उम शहर में तो घादमी तक लापता मिला ।
जिन मछलियों को कुछ मछेरे मार कर लाए,
उन मछलियों की लाश पर गांधी लिखा मिला ।
जो रीशनी को उम्र भर भी खोज ना पाए,
उनकी समाधि पर हमें दीपक जला मिला ।
वह खत जिसे कामिद नहीं यमराज लाया था,
उम खत पे हमको दोस्तो ! भपना पता मिला ।
जो ज़िन्दगी भर बावफा बन माथ में चले,
घात्रिर उन्ही की घोर में हमको दगा मिला ।

गज़ल-49

गम की दुनिया के जोहरी है, कितने जाने-माने हम,
उनके भी गम से है वाकिफ जिनसे है बेगाने हम ।
जिन आँखों से हम पीते थे उन्हें मोतियाबिंद हुआ,
इमीलिए तो बदन रहे है, रोज नये मैखाने हम ।
होने और किन्ही हाथों में टूट गए होते अब तक,
सदियों से प्यासे हैं फिर लिए खड़े, पैमाने हम ।
मदिर, मस्जिद, गुफ्तारे और गिरजे नजर नहीं आये,
हर जगह बस ! देख के लीटे है खाली तहखाने हम ।
माना रूप नहीं आकर्षित करता अधी आँखों को,
किन्तु कभी भी जजबातो से नहीं रहे अनजाने हम ।
देखा गर उसको होता तो साथ निभाना मुमकिन था,
किन्तु जिसे देखा ना कभी अब उसके है दीवाने हम ।

गजल-50

बीच हमारे केवल कुछ सामो की दूरी है,
मगर नहीं मिल सकने है कैसी मजबूरी है ।
ध्यान मगन कब से बैठे हैं हम अपने भीतर,
अब तक लेकिन क्यों अपनी हर साध अचूरी है ।
गाव उजाडे है हमने ही अपने गीतो के,
किन्तु उजडना गीत नहीं यह दर्द ज़रूरी है ।
पाम खजूरो का जगल है, भटक रहा है तन,
मन हर वृक्षो पर लिखता, मोमम अचूरी है ।
खोज रहा है कब से तुमको मन के मरुथल में,
और कहते हो तुम मृग में उगकी कस्तूरी है ।
दलती हुई शाम ने मेरे जस्मो को छूसा,
फिर मूरज में कहा कि ये तुझमा मिन्दूरी है ।

मूना-मूना कितना हमको भागन लगता है,
 विधवा मा की माग सरीखा भावन लगता है ।
 किम चेहरे से लुशियां मांगें, कोई नहीं ममभा,
 हर चेहरा पीडा का यम ! बिजापन लगता है ।
 खुद जाकर क्रांतिल के घर धी मपने रख आए,
 जिनको अपने घूं में भीगा दामन लगता है ।
 खडित है वो खुद ही यारो ! कौन कहे उनसे,
 टूटा-टूटा जिनको हर एक दर्पण लगता है ।
 मन से है सभ्राट मगर वह भीख मांगता है,
 कितना धन है पास मगर वह निर्धन लगता है ।
 मन से मन की दूरी सब तक तय ना कर पाये,
 तन से तन तक का जिनको कि बंधन लगता है ।

गज़ल-52

तुम मेरी तरुदीर में चाहो तो गम लिख देना,
घाखो मे आशू, पलको मे भातम लिख देना ।
हर चेहरे को हमने यूँ तो भुस्काने बांटी,
तुम अब चाहो तो पीडा की सरगम लिख देना ।
हमने हर घाखो के सपनो को बसत बांटे,
तुम अब चाहो तो पतभङ्ग का मौसम लिख देना ।
माना कि तरुदीर ने हमको, मरुपल ही सीपे,
पर तुम चाहो तो नदिया का सगम लिख देना ।
सिर्फ तुम्हागी कलम लिखेगी किस्मत के पन्ने,
अपने हाथो मे जो भी चाहो तुम लिख देना ।

रात का पहला पहर और मैं,
दर्द का लम्बा सफर और मैं ।

ज़िन्दगी भर याद आएंगे,
दोस्त ! तुझको ये शहर और मैं ।

कितने गम दिल में छुपाए हैं,
गांव की बूढ़ी नहर और मैं ।

आग को बुझने नहीं दोगे,
घाम का मेरा ये घर और मैं ।

प्यार में हाज़िर हैं कटने को,
लीज़िए, मेरा ये सिर और मैं ।

कितनी गज़लों को जन्म दोगे,
आपकी पहली नज़र और मैं ।

गज़ल-54

पुस के कुछ भीपडो को जिन्दगी कहते है वो,
घाग तक को घाजकल तो गीशनी कहते है वो ।
प्यार को जो घात्मा से जोडने थे कल तलक,
दिल लगाने को भी अब तो दिन्लगी कहते है वो ।
माथ मे थे कल तलक जो धूप मे माया हो ज्यो,
घाजकल उन तरु को यागे, घजनबी कहते है वो ।
अपने खातो मे लिखी है गैर की रमवाइया,
क्या लिखा उनके लिए महू क्या कभी कहते है वो ।
रीढ़ को हट्टी तनक भी रख रहन जो जी रहे,
क्या पता उनको भी कयो कर घादमी कहते है वो ।

युद्ध न हम हारे होते गर, मिले न होते मार नए,
 हाथ अपाहिज हुए तो हमको भेट मिले हथियार नए ।
 पाइव वही, वही है कौरव, वही खेल है धोखे का,
 किन्तु बचेगी नही द्रोपदी, कृष्ण जो है इस बार नए ।
 मूरज से मुँह फेर दोस्तो, खडहर बन कर क्या पाया,
 चमगादड़ का वंश बहाया गिद्धो के परिवार नए ।
 खेल कूद कर बडी हुई जो धूप तुम्हारे आगन मे,
 बेच उसे मदिर-मस्जिद मे, लाए तुम अधियार नए ।
 चीख-पुकार, लूट और हत्या, दंगों मे पैदा होकर,
 जाने कैसे रह जाते है, जिन्दा ये त्यौहार नए ।
 जिस्म परोमा है पत्तल मे, नगा कर आजादी ने,
 चूमो-चाटो, नौचो इसको, दूँदो फिर अधिकार नए ।

गज़ल-56

देसेगा क्या राही घोर ?
कितनी बार तबाही घोर ?
या तो घाघें खुली न रख,
या दे नई गवाही घोर ।
चौराहे पर चोर मिला,
होगा वही मिपाही घोर ।
देश हथेली का अतर,
दाईं घोर तो बाईं घोर ।
वहाँ मिलेगी भला बत्ता,
घून मे मस्ती म्याही घोर ।
धूम्रा है तो रोटी छीन,
दमकी नहीं दवाई घोर ।

कैसे देते वे भला अपनी बनि,
जिनको देनी थी मिफं अद्दाजलि ।
रीढ़ की हड्डी गई जब टूट तो,
पहन आए माप की वे कैंचुली ।
खून में मोजे है उनके सुखतर,
जो कि पहने जूतिया है मखमनी ।
एक औरत ने जना है भेडिया,
इस खबर से शहर में है खलवली ।
तार पर लटकी हुई चमगादड़ों,
उल्लुषो में भी अधिक है दोगनी ।
सर मलामत देख कर सबने कहा,
मूमली हारी या टूटी ओखली ।
विस्तरों पर रात जो नोची गई,
थी किमी मजबूर औरत की कली ।

गज़ल-58

इस शहर में शम्श निरापद न खोजो,
यातना की दोस्तो, मरहद न खोजो ।
घोहदे ऊँचे बहुत उनके कभी थे,
किन्तु अब हैं लाश उनका पद न खोजो ।
तुम पहाड़ों की बगल में चल रहे हो,
भूल कर भी इस समय तुम कद न खोजो ।
कोई भी कायम नहीं अपनी जगह पर,
दोस्तो ! इस शहर में अंगद न खोजो ।
मिर्क आधी की जुटाओ तुम व्यवस्था,
अब दहाने को कोई बरगद न खोजो ।
यूदकशी कानून तो कर ही चुका है,
लाद कर तुम लाश अब ससद न खोजो ।

देह दीवारो में चिनवाते चलो,
 लाश काम्प्यूटर से गिनवाते चलो।
 प्रायेगो इक्कीसवीं इक दिन मदी,
 हड्डियां भूखो की बिनवाने चलो।
 बिलबिलाते पेट में बारूद भर,
 सीरियल टी. वी. के दिखलाते चलो।
 गदगो में ही कमल खिलते मदा,
 गदी बम्ती में ये दोहराते चलो।
 टैंकम रुई सा लगा कर पीठ पर,
 चाबुको से उनको धुनवाते चलो।
 गाव पर दो शहर की चरबी चढा,
 जगलो का गोश्त कटवाते चलो।
 आग चूल्हे की मिले ना लाश को,
 मोलियों से जिस्म भुनवाने चलो।

गज़ल-60

घाव-गाव की नही यहा पर, तेज दुपहरी है,
रिश्वो का तो नाम यहा पर मरी गिलहरी है ।
चिमनी के धूँ से ज्यादा धूँझाँ है मन में,
कोलाहल बाहर है भीतर चुप्पी गहरी है ।
देहाती हो इसीलिए तो दूध पिलाते हो,
धजगर से ज्यादा शहरी का बच्चा जहरी है ।
मच्छर जिनको समझ रहे हो वो मद्युघारे है,
मगरमच्छ के जाल मरीखी बनी ममहरी है ।
मेतो घोर खलिहानो में जो रिश्वे उगते है,
उन रिश्वो के भाव-मोत के लिए कनहरी है ।
चिकने-चुपडे संबोधन घोर शहद मिली बाणी,
धब तो समझ गए होंगे यह भाषा शहरी है ।

घाती है उनको हमपे बड़ी ग्रीभ आजकल,
 हम कल तक नाबीज थे, है चीज आजकल ।
 बंजर हुई जमीन है या ऋतु है बेईमान,
 उगते नहीं है रोगनी के बीज आजकल ।
 मावन भी है, भूले भी है, मौजूद मुहागिन,
 फिर किसलिए मनती नहीं है तीज आजकल ।
 मैं घुन अगर हूँ दोस्ती, मुझको जवाब दो,
 जाता है मेरा दिन भी क्यों पमीज आजकल ।
 वे मर्द हैं तो बाक उनको मिट भी करे,
 क्यों खोजने हैं दिन नई तजबीज आजकल ।
 काटो न नेवले को, सिर्फ खून देख कर,
 है माँप के खूँ से रंगी दहलीज आजकल ।

गज़ल-62

कान के हम मवालात हैं,
पाग्दर्शी खयालात हैं ।
के ये भूखे मरे इमलिए,
हम ये समझे कि मुकरात है ।
जाना नींदो में रहकर के ये,
पक्षियों के भी दिन-रात हैं ।
दिल से अहमाम जो कर मको,
जंगलो के भी जजबात हैं ।
कंद पग-पग पे है जिन्दगी,
रूह की हम हवालात हैं ।
गर्दियों से है जो लड रहे,
घबरा की ये करामात हैं ।

अपनी आदत सुधार कर देखो,
खुद के हाथों ही हार कर देखो ।
सबके चेहरे उतारने वालो,
अपना चेहरा उतार कर देखो ।
वह जिसे खोजते हो मन्दिर में,
उसको भीतर पुकार कर देखो ।
बिरबे खिलने से पहले तुलसी के,
अपना आंगन बृहार कर देखो ।
ये जहां तुमको मान्यता देगा,
खुद को इक पल नकार कर देखो ।
जानना चाहते हो पाप है क्या,
भूख का पल गुजार कर देखो ।

गज़ल-64

देग नाग्रून डर गई मुनिया,
डूब पानी में मर गई मुनिया ।
बूढ़ा बापू था पेठ पीपल का,
जिमकी शाखों से भर गई मुनिया ।
साभ लेकर के घाई गो-धूलि,
जिममें मिलकर बिखर गई मुनिया ।
है किनारों को खोज जब तक भी,
कितनी गहरी उतर गई मुनिया ।
जब हवा पूछती है उमका पता,
पेठ कहते हैं घर गई मुनिया ।
मरना नुबने से वही बेहतर है,
मरू के कितना नियर गई मुनिया ।



- 16 मई 1955 को जन्म लेने के अतिरिक्त मेरे पास कोई चारा नहीं था.
- शिक्षा का बोझ ढी नहीं पाया और आधी अधूरी शिक्षा लेकर सरकार के हाथों मासिक किरातों में पटी दरों पर बिक गया.
- संप्रति शिक्षा विभाग में पुस्तकालयाध्यक्ष हूँ.
- "कविताएँ लिखना बुरे दिनों का ऐश है" यह मान कर बचपन से ही कविताएँ लिख रहा हूँ.
- 'दर्द-धे-अंदाज' के अतिरिक्त 'शवयात्रा स्वीकृतियों की', 'कैबटस के फूल', 'सलीब पर टगा मूरज' और 'मैं से तुम तक' काव्य संग्रह लिखे.
- उपन्यास 'कफ़न की नीलामी', कहानी संग्रह 'अपना-अपना अहसास' और 'अंधा अभिमन्यु' अभी तक प्रकाशकों की ढोज में.
- पता—सुरेन्द्र चतुर्वेदी
कुंदन नगर, अजमेर (राजस्थान)